शांतिवन। बाल व्यक्तित्व विकास शिविर में आए हुए बच्चों को ज्ञान की मीठी बातें सुनाते हुए ब्र.कु.निर्वैर।

जीवन गीत..

लेकिन तीनों की दृष्टियां अलग-अलग हैं। एक से पूछे जाने पर उसने उदासी और दुख से कहा: 'पत्थर तोड़ रहा हूँ।' इसमें क्रोध भी रहा होगा। यह उदासी आक्रमक है। यह बड़े बे-मन से तोड़ रहा है। यह बड़ी मजबूरी में तोड़ रहा है। यह बड़ी गुलामी में तोड़ रहा है। तोड़ना पड़ रहा है, इससे बहुत पीड़ित है। यह एक जबरदस्ती है। जैसे कोई कारागृह में पत्थर तोड़ रहा हो। पत्थर तोड़ने पड़ रहे है, तोड़ने की कोई आकांक्षा, कोई इच्छा, कोई रस नहीं है। इसीलिए जिसने पूछा, उस पर यह क्रोधित भी हुआ। उसने कहा: 'पत्थर तोड़ रहा हूं। शायद कहा हो कि दिखाई नहीं पड़ता? अंधे हो? साफ है कि पत्थर तोड़ रहा हूं। इसमें और क्या पूछने की बात है?

उदासी के दो ढंग हैं। एक उदासी का पॉजीटिव- विधायक ढंग है, तब उदासी क्रोध बन जाती है। और एक उदासी का निगेटिव, पैसिव, निष्क्रिय ढंग है, तब उदासी केवल बोझिलता होती है– एक उपेक्षा, एक निष्क्रियता। तब उससे क्रोध नहीं निकलता, तब सिर्फ शिथिलता छा जाती है।

क्रोध उदासी का आक्रामक रूप है और उदासी क्रोध का अनाक्रमक रूप है। जो लोग हमला कर सकते हैं, वे क्रोध करते हैं, जो लोग हमला नहीं कर सकते हैं, वे रोते हैं, उदास होते हैं।

दूसरे मजदूर की उदासी अनाक्रमक है। उसने यह नहीं कहा कि पत्थर तोड़ रहा हूं, अंधे हो, दिखाई नहीं पड़ता? उसने कहा: 'आजीविका कमा रहा हूं।' मजबूरी में वह भी है। लेकिन मजबूरी जैसे किसी और ने नहीं थोपी है, अपने हाथ से चुनी है। कारागृह में वह भी है, लेकिन किसी ने धक्के देकर कारागृह में नहीं डाला हैं। खुद ही चला आया है। आजीविका तो कमानी ही होगी। रोजी-रोटी तो कमानी ही होगी। बच्चे हैं, पत्नी है। अपने हाथ से जो जाल खड़ा किया है, उसका कर्तव्य तो निभाना ही होगा। और तीसरे मजदूर ने अपने गीत की गुनगुनाहट को रोककर कहा: मंदिर बना रहा हूं। वह भी पत्थर तोड़ रहा है।

बाहर के तथ्य में कोई भेद नहीं है। रत्ती भर अंतर नहीं है। धूप एक-सी है। पत्थर तोड़ने का श्रम एक-सा है। तीनों का पसीना बह रहा है। लेकिन पहला आक्रामक रूप से दुखी है। दूसरा अनाक्रमक रूप से उदास है।

तीसरा प्रफुल्लित है। वह पत्थर नहीं तोड़ रहा है, मंदिर बना रहा है। उसका कृत्य किसी विराट कृत्य से जुड़ा हुआ है। वह कोई छोटा काम नहीं कर रहा है। एक विराट मंदिर बन रहा है, उसका भागीदार है, उसका निर्माता है, उसका सृष्टा है। उसके पत्थरों के बिना यह मंदिर बन न सकेगा। उसका हाथ इस मंदिर के बनने में है।

तीसरा प्रफुल्लित है, क्योंकि अपने से बड़ी किसी चीज से जुड़ा है। तीसरा खुश है, आनंदित है, क्योंकि कुछ सार्थक काम हो रहा है।

रोटी कमानी कोई बड़ी सार्थकता नहीं है। तुम जीवन में सौ में से निन्यानबे लोगों को उदास देख रहे हो, क्योंकि वे सब रोटी-रोजी कमा रहे हैं। जाते हैं दफ्तर, दुकान, काम करते है, वे तो रोटी-रोजी कमा रहे हैं। रोटी-रोजी कमाने वाला चित्त बहुत प्रसन्न नहीं हो सकता है। भरना है पेट किसी तरह, चाहते थे कि अगर पेट न होता तो अच्छा। राह देखते हैं कि मर जायें तो छुटकारा मिले।

दो दुकानदार साझीदार थे। धंधा बुरा जा रहा था। और धंधा वस्तुत: कभी भी अच्छा नहीं जाता । क्योंकि आकांक्षाएं सदा ज्यादा हैं। सभी व्यवसाय पीछे छूट जाते हैं। कमाई सदा कम होती है- वासना से। धंधे सदा ही बुरे जाते हैं। कितना ही कमाओ, 'पेट' भरता नहीं है! पेट के भरने का कोई उपाय नहीं है।

तो दोनों रोना रो रहे थे कि धंधा बुरा जा रहा है। ग्राहक दिखाई नहीं पड़ते। और एक तो इतना उदास था कि उसने कहा, 'इससे अच्छा था कि मैं पैदा ही नहीं होता। यह जिंदगी होती ही न, तो अच्छा था। बेहतर था, मैं पैदा ही न होता। किस दुर्भाग्य के क्षण में मैं पैदा हुआ!

दूसरे आदमी ने कहा: 'छोड़ो भी, ऐसा भाग्य किसको मिलता है। ऐसा सौभाग्य बहुत कम लोगों का होता है कि वे पैदा ही न हों। यह होता ही किसका है? यह बात ही नहीं उठाओ। इतना भाग्यशाली कौन है - कि पैदा ही न हो! यह तो बड़े सौभाग्य की घटना है।

पैदा होना होगा, दुर्भाग्य शुरू हो गया। पेट भरना ही होगा। रोटी-रोजी कमानी ही होगी। काम करना ही होगा। चित्त उदास होता है, क्योंकि तुम जो कर रहे हो, वह इतना छोटा मालूम पड़ता है। और कर-करके भी उससे कोई अर्थ , कोई निष्पत्ति तो निकलती नहीं, कोई सार तो निकलता नहीं।

रोज उठोगे, दफ्तर जाओगे, लौट आओगे। रोज फिर उठोगे, फिर दफ्तर जाओगे, फिर लौट आओगे। जीवन एक बंधा हुई लिंक हो जाता है। जैसे मालगाड़ी के डब्बे शंटिंग करते रहते हैं - अर्थहीन, ऐसा ही जीवन है। दुकान-बाजार-घर-बाजार: शंटिंग होती रहती है। एक दिन तुम मर जाते हो, कहीं कोई मंजिल उपलब्ध नहीं होती!

तीसरे मजदूर ने कहा: मंदिर बना रहा हूं।' इसके कृत्य में एक सार्थकता है। वह तो मिट जायेगा, लेकिन मंदिर रहेगा। वह तो नहीं रहेगा, लेकिन उसका कृत्य बचेगा। समय की धारा में खुद तो खो जायेगा, लेकिन वह कुछ बना जा रहा है, जो बड़ा स्थायी है, हजारों लोग पूजा करेंगे।

जिन लोगों के जीवन में भी तुम्हें प्रफुल्लता दिखाई पड़ती हो, तुम फौरन समझ जाना कि वे कोई मंदिर बना रहे हैं। चाहे वह मंदिर सच हो कि झूठ , यह सवाल नहीं है। कौन-सा मंदिर सच है।

लेकिन जिस आदमी को भी तुम प्रसन्न देखो, प्रफुल्ल देखो, समझ लेना कि वह कोई मंदिर बना रहा है। वह किसी ऐसे कृत्य में लगा है, जो उससे बड़ा है। राष्ट्र की सेवा कर रहा है, कि समाजवाद ला रहा है, कि स्वतंत्रता का अभियान चला रहा है, कि शहीद होने की तैयारी किये बैठा है, कि गरीबी मिटाकर रहेगा। तुम पाओगे कि उसकी आंखों में एक चमक है, एक प्रफुल्लता हैं। जीवन जीना है। माना ऊंचाईयों के शिखर अर्जित करना तो हो ही साथ में खुशी व उमंग की चमक लिए हो।

प्रसन्नता का रस जीवन में अंगीकार हो। जीवन में लिखावट हो जो गीत बन जाए न कि रुदन रोना हो। यह स्वतंत्रता आपके हाथ में है।

व्यर्थ में समय गंवाना माना आंतरिक ऊर्जा गंवाना

प्रश्न:- अधिकांश समय हमारा ध्यान अपने पड़ोसी या दूसरों पर रहता है कि वह क्या कर रहा है? स्वयं के बारे में सोचने की आदत कैसे डालें?

उत्तर:- हमें इसके लिए स्वयं को देखना होगा, जब तक हम स्वयं को नहीं देखेंगे तब तक हमें पता भी नहीं चलेगा कि हम कितना ज्यादा गल्तियां करते हैं। हमारा एक-एक विचार व्यर्थ गंवाना माना आंतरिक ऊर्जा की बर्बादी करना है। मैं कितना भी बैठकर औरों के बारे में सोचती रहूँ इससे कोई फायदा होने वाला नहीं है क्योंकि औरों को मेरे हिसाब से तो चलना है नहीं। अगर यही ऊर्जा हम अपने बारे में सोचने में लगा दें तो हम कुछ खास करने में सक्षम हो जायेंगे।

अब जैसे ही हम निर्णायक होने लगते हैं तो इससे निराशा उत्पन्न होती है। मान लो कोई सीनियर है जो अपने जूनियर को बार-बार कोई बात बोल रहा है लेकिन वो मानता ही नहीं है और अपने हिसाब से ही कर रहा है तो अब क्या होगा? इससे निराशा भी होगा और गुस्सा भी आयेगा। जिससे हम आपे से बाहर हो जाते हैं माना हम अपनी धैर्यता की सीमा को तोड़ देते हैं। क्योंकि व्यक्ति को जब क्रोध आता है तो वह न कुछ सही सोच सकता है और न ही कोई सही निर्णय ले पाता है। माना उसकी स्थिति थोड़ी देर के लिए पागलों जैसी हो जाती है। अब ऐसा सीन क्यों उत्पन्न हुआ? क्योंकि आप आपे से बाहर चले गये। पहली बात तो उस संवेदना ने आपको अपने प्रभाव में ले लिया, जिसके कारण आप अपनी क्रियाशीलता करने में सक्षम नहीं रहें।

स्वयं को देखने से मुझे ये समझ में आयेगा कि मेरे लिए क्या सही है और क्या गलत। दूसरों को देखना बहुत आसान है एक दिन आप स्वयं को देखो तो आपको पता चलेगा कि ये कितना आसान है। कोई दूसरा व्यक्ति आपको देखकर बता सकता है कि आपके लिए क्या सही है और क्या गलत है? लेकिन हम दोनों एक दूसरे को बदल तो नहीं सकते। लेकिन दोनों अगर अपने आपको देखना शुरू करे उतने ही समय में कि मेरे लिए क्या सही है, तो आपको बहुत आश्चर्य होगा!

ब्रह्माकुमारीज् में हमें ये सिखाया जाता है कि 'जब हम बदलेंगे तो जग बदलेगा' हमारा स्लोगन है 'आत्म परिवर्तन से विश्व परिवर्तन'। इससे एक तो हम बदलें फिर हमारा देखने का दृष्टिकोण बदला तो हमारे लिए सारा संसार ही बदल गया। इससे एक फायदा और है कि यदि हम एक-एक बदलते गये तो विश्व परिवर्तन तो अपने आप ही हो जायेगा। स्वयं को बदलने की यह सबसे सरल विधि है। लेकिन हमने इसे कठिन बना दिया कि पहले आप बदले तब मैं बदलूंगा।

प्रश्न:- हमारी निर्भरता अगर

-ब्र.कु.शिवानी

दूसरों पर रहती है तो हमारा दृष्टिकोण भी तो उनसे प्रभावित होगा ना?

उत्तर:- क्योंकि हमारी जागरूकता बाहर थी। दूसरी चीज जो बहुत बड़ा बहाव बनता है हमारी खुशी के लिए वो है 'हमारी दूसरों से अपेक्षा'। क्योंकि हमने लोगों से बहुत सारी अपेक्षायें बनाकर रखी है। जब लोग हमारी अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरते हैं तो हमारी खुशी का स्तर नीचे चला जाता है। मान लो आज बस समय पर नहीं आयी, मेरी अपेक्षा थी कि बस रोज सुबह आठ बजे आती है, तो आनी चाहिए। जैसे ही वो समय पर नहीं आयी तो मेरा खुशी का स्तर एकदम से गिर जाता है। इसी तरह से हम चेक करें कि हम जीवन में किन-किन लोगों से अपेक्षायें बनाये हुए हैं तो आप पायेंगे हमने अपने संबंधों में भी लोगों से अपेक्षा बनाये हुए हैं।

आर.के.पुरम (दिल्ली)। ट्री प्लांटेशन कार्यक्रम में ब्र.कु.ज्योति, ब्र.कु.अनिता तथा अन्य।